हिंदी दलित साहित्य : अवधारणा, इतिहास और संस्कृति

धर्मवीर यादव
Post Doctoral Fellow
ICSSR/CIL/SL/JNU, NEW DELHI

शोध सार:
'दलित साहित्य' मनुष्य केन्द्रित, मानव मुक्ति का मानवतावादी साहित्य है | उस मनुष्य और समाज की मुक्ति का साहित्य है जो मानवीय अधिकारों से पूर्णतःवंचित रहा | जिस मनुष्य को गुरु, गुरुकूल, ज्ञान, संस्कार, पवित्रता और संस्थान की निर्मिति अर्थात् खांचे (Stracture) में कभीं भी प्रवेश नहीं दिया गया | बल्कि उस मनुष्य के "श्रम" और "जीवन संघर्ष" पर पूर्णतः आनंदमाय जीवन वर्चस्वशाली वर्ग ने जीया | इस क्रम में— जो मनुष्य दुर्गति, दलन, दमन, उत्पीड़न, प्रताड़ना, उपेक्षा, घृणा और शोषण का शिकार हुआ—वही "दलित" है | इस दृष्टि के साथ यह शोधालेख लिखा गया है |

बीज शब्द : *दलित, दलन, दमन, अस्मत, अस्मिता, आक्रोश, यातना, संघर्ष और स्वप्न, चेतना, वैचारिकी, सैद्धांतिकी, संस्कृति, धर्म, ईश्वर, नकार*

1. आलेख

दलित साहित्य की अवधारण और उसके मानवीय-मुक्ति के चिन्तक के आधार को स्पष्ट किया जाय तो,यह विरोध की चेतना और अपनी अस्मित की पहचान के साथ अभिव्यक्त होती है | जिसे कंवल भारती "दलित साहित्य का मुक्ति काल" कहते हैं | जो सच भी है | इसी काल में दलित साहित्य अपनी वैचारिकी, अस्मिता और आधुनिकता संपन्न चेतना द्वारा भाग्य और भगवान अर्थात् ईश्वर को नकारकर मानव मुक्ति के सन्दर्भ में अभिव्यक्त होती है | सन् 1975 में दलित चेतना की मजबूत साहित्यिक धारा दिखती है | क्योंकि "एक पृथक धारा के रूप में हिंदी दलित साहित्य इसी युग में अस्तित्व में आया, बल्कि उसे परिभाषित भी इसी काल में किया गया | यह धारा समग्र रूप से अम्बेडकर दर्शन से विकसित हुई, और यह दर्शन ही उसका मूलआधार है | अम्बेडकर दर्शन में दलित मुक्ति की अवधारणा की अभिव्यंजना ही वर्तमान हिंदी दलित साहित्यकी प्रतिबद्धता है| इसने नये सौन्दर्यशास्त्र को गढ़ा, जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांत पर आधारित है, इसी नये सौन्दर्यशास्त्र से हिंदी साहित्य का मूल्यांकन किया |"[1]

दलित साहित्य की हिंदी साहित्य में पहली दस्तक कविता के माध्यम से होती है | लेकिन दलित साहित्य की चेतना, अस्मिता और वैचारिकी की पहली सचेत अभिव्यक्ति उपन्यासों और आत्मकथाओं से मानी जाती है | कंवल भारती का मानना है— "हिंदी में पहला दलित उपन्यास डी.पी. वरुण द्वारा लिखित "अमर ज्योति" को

माना जा सकता है, जो 1982 ई. में प्रकाशित हुआ था |"[2]1987 ई. में 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका में दलित चेतना और अस्मिता संपन्न दलित साहित्य की पहली कहानी- 'लटकी हुई शर्त' - प्रहलाद चंद दास की छपती है| इसके बाद 1995 ई. में "जय प्रकाश कर्दम ने हिन्दी दलित साहित्य को 'छप्पर' नाम से पहला उपन्यास दिया|"[3] साथ ही प्रेम कपाड़िया ने 1995 ई. में "माटी की सौगंध" उपन्यास लिखा | "ये दोनों उपन्यास गाँव की पृष्ठभूमि के हैं और दोनों में ही दलित चेतना का रूपांतरण आक्रोश में हुआ है |"[4]

इसीके साथ दलित समाज के दुःख, दर्द, पीड़ा, प्रताड़ना, शोषण, दमन, दलित चेतना और अस्मिता के साथ, हिंदी दलित साहित्य की पहली आत्मकथा 1995 ई. में "अपने-अपने पिजरें" आई | जिसके लेखक मोहनदास नैमिशराय हैं | इसके बाद दलित समाज के आक्रोश और दलित चेतना, अस्मिता को 1997 ई. में ओमप्रकाश वाल्मीकि नेअपनी आत्मकथा "जूठन" में अभिव्यक्त किया | डी. आर. जाटव की आत्मकथा "मेरा सफ़र मेरी मंजिल" 2000 ई. में आई | 2002 ई. में सूरजपाल चौहान की "तिरस्कृत" और 2002 ई. में ही माताप्रसाद गुप्त की आत्मकथा "झोपड़ी से राजभवन तक" प्रकाशित होती है | 2006 में सीताराम जाटव की आत्मकथा "मेरा गाँव और जीवन यात्रा", उसके बाद 2008 ई. में प्रोफेसर श्याम लाल की आत्मकथा "Untoldstory of A Bhangi" हिंदी तर्जुमां 'एक भंगी की अनकही कहानी' के रूप में छपी | 2009 ई. में प्रोफ़ेसर श्यौराज सिंह 'बेचैन' की आत्मकथा "मेरा बचपन मेर कंधों पर" और 2009 ई. में ही रूपनारायण सोनकर की आत्मकथा "नागफनी" आती है | 2010 ई. में प्रोफेसर तुलसी राम की आत्मकथा "मुर्दहिया" आती है | 2011 ई. डॉ. धर्मवीर की विवरणात्मक आत्मकथा "मेरी पत्नी और भेड़िया" आती है, और 2011 ई. में सुशीला टाकभैरो की आत्मकथा "शिकंजे का दर्द" आदि आत्मकथाएँ आती हैं |[5]

ये आत्म कथाएँ ही दलित साहित्य की जमीन हैं | शरणकुमार लिंबाले दलित आत्मकथा की अनुभूति अभिव्यक्ति पर लिखतें हैं— "आत्मकथा का अर्थ जो जिया है, भोग है और देखा है, इतने तक ही सीमित नहीं है, अपितु जो जीवन यादों में समाया हुआ है, वही आत्मकथा है | ये यादें सच्ची घटनाओं से जुड़ी रहती हैं | कागज पर शब्दों का रूप लेकर ये यादें प्रतिभा के पैरों से चली आती हैं |"[6] अपने समाज के दुःख, दर्द, पीड़ा, दमन, यातना, संघर्ष और स्वप्न को मानवीय मुक्ति के सन्दर्भ में दलित अस्मिता और चेतना सम्पन्नता के साथ ये आत्मकथाएँ अभिव्यक्त करती हैं | जाति और वर्णाश्रमी मूल्यों के आधार पर किए जा रहे 'सुपर शोषण' को दर्शाती हैं | इससे मुक्ति के लिए डॉ. अम्बेडकर की वैचारिकी को आधार बनती हैं |

'दलित साहित्य' मनुष्य केन्द्रित, मानव मुक्ति का मानवतावादी साहित्य है | उस मनुष्य और समाज की मुक्ति का साहित्य—जो वैदिक काल से 1947 तक सभी मानवीय अधिकारों से पूर्णतःवंचित रहा | जिस मनुष्य को गुरु, गुरुकूल, ज्ञान, संस्कार, पवित्रता और संस्थान की निर्मिति अर्थात् खांचे(Stracture) में कभीं भी प्रवेश नहीं दिया गया | बल्कि उस मनुष्य के "श्रम" और "जीवन संघर्ष" पर पूर्णतः आनंदमाय जीवन वर्चस्वशाली वर्ग ने जीया | इस क्रम में— जो मनुष्य दुर्गति, दलन, दमन, उत्पीड़न, प्रताड़ना, उपेक्षा, घृणा और शोषण का शिकार हुआ— वही "दलित" है |

मानव प्रगति के इतिहास में एक ऐसा देश-काल आता है | जब चालाक और वर्चस्वशाली मनुष्य को यह समाज अर्थात् "जन", चुनौती देते हुए—क्रांति कर के, 'रेडिकल चेंज' करते हुए वर्चस्वशाली वर्ग के वर्चस्व को उखाड़ फेंकने की कोशिशे तेज हुईं और वहां 'जन' के तंत्र अर्थात् एकतंत्र पर जनतंत्र को स्थापित करते हुए उसे विकसित किया | जिसे "जनतंत्रीय-युग" कहा गया | जनतंत्रीय युग में इस "दलित" मनुष्य के साथ सभी मनुष्यों को—समान और सभी मानवीय अधिकार दिए गए | जिसमें सबसे महत्त्वपूर्ण मानव मूल्य हैं— "स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व |" इस ब्लैक या दलित[7] मनुष्य के—दुःख, दर्द, पीड़ा, दलन, दमन, यातना और शोषण के वेदना की रचनात्मक साहित्यिक अभिव्यक्ति "दलित साहित्य" है | "आह का उद्दात्त रूप अर्थात् दलित साहित्य |"[8]

भारतीय सामाजिक संरचना अर्थात् हिन्दू सामाजिक संरचना में इस मनुष्य अर्थात् दलितों, आदिवाशियों और स्त्रियों को सभी मानवीय अधिकारों से पूर्णतः वंचित रखा गया | उसके मन-मस्तिष्क को गुलाम बना कर, "जाति और वर्णाश्रमी मूल्यों" को मनवाया और आत्मसात करवाया गया | इन शोषणकारी मूल्यों को अस्वीकार करने पर, उन पर जबरदस्ती थोपा गया | इतना ही नहीं उनकी व्यवहारिक बुद्धि को भी कुंद कर दिया गया | और उसे ज्ञान के सभी अनुशासनों में प्रवेश से दूर रखा गया | इस तरह मनुष्यों का एक ऐसा वर्ग "गढ़ा और खड़ा" किया गया जो पूर्णतः "श्रम और सेवा" करने के लिए हो | इसी श्रमशील समाज का समाजशास्त्र हैं "वेद"|

जब से यह हिन्दू सामाजिक संरचना 'गढ़ी और खड़ी' की गई तब से लेकर आज तक अर्थात् 1947 ई. तक के दुःख, दर्द, पीड़ा, दलन, दमन, यातना और वेदना को अभिव्यक्त करने वाला 'दलित साहित्य' एक ऐसे यथार्थ से साक्षात्कार करता है, जो हजारों-हजारों साल तक रचनाकारों की रचना का कभी भी विषय नहीं बनी | ऐसी उफनती पीड़ा, अँधेरे कमरे की-सी जिंदगी में व्याप्त वेदना, अपमानित जीवन का संत्रास, दारुण गरीबी, विवशता और दीनहीन होने की वेदना की रचनात्मक अभिव्यक्ति है "दलित साहित्य"| और उस मनुष्य में दलित अस्मिता को पहचाने और सामाजिक विसंगतियों का प्रतिरोध करने का भाव जगाया है |

दलित साहित्य का लक्ष्य और उद्देश्य है— मनुष्यत्व अर्थात् समाज में मानव ही सत्य है इस बात की भावना-जगाना और उसे स्थापित करना | जो शायद बुद्ध, कबीर और अखिल भारतीय भक्ति आन्दोलन, जो "मनुष्यत्व और प्रेम" के संदेश का आन्दोलन था, से लिया गया है | यह डॉ. अम्बेडकर के मानव मूल्य के सपने— "एक व्यक्ति : एक मूल्य के सिद्धांत"[9] में विश्वास करती है | इसी सिद्धांत पर आधारित मनुष्य केंद्रित यह साहित्य, मनुष्य के सुख-दुःख से होते हुए, मनुष्य को "महान" मानता है |

"दलितों की वेदना ही दलित साहित्य की जन्मदात्री है | यह वेदना एक की नहीं, ना ही एक दिन की है | यह वेदना हजारों की है, हजार वर्षों की है |"[10] इसी कारण दलित साहित्य "मैं" की जगह "हम" के रूप में व्यक्त होता है | इसीलिए यह अपने समाज के साथ व्यक्त होती है | सामूहिकता में ही मुक्ति खोजती है | इसमें व्यक्त वेदना, सारे दलित समाज की वेदना होती है | इसी कारण दलित साहित्य की वेदना 'सामाजिक वेदना' है | इस वेदना के गर्भ से दलित साहित्य में "नकार" और "विद्रोह" पैदा हुआ | अपने ऊपर लादी गई अमानवीय व्यवस्था के विरुद्ध,

यह "नकार और विद्रोह" प्रस्फुटित हुआ | दलित साहित्य को यह "नकार" यथार्थ परक दृष्टि के साथ, अमानवीय सामाजिक संरचना को तोड़ते हुए—समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व को साधिकार समाज में स्थापित करती है|**

यह साहित्य उस "विद्रोह" का उन्मेष है जो किसी विशिष्ट जाति या व्यक्ति के विरूद्ध नहीं बल्कि "स्व" की खोज में निकले हुए एक पुरे समाज का पूर्व परंपराओं से विद्रोह एवं अपने अस्तित्व की स्थापना का प्रयास है | इस विद्रोह का साधिकार अभिव्यक्त रूप—"मैं मनुष्य हूँ, मुझे मनुष्य के सभी अधिकार मिलने चाहिए |"[11] अर्थात् सभी मानवीय मूल्य और अधिकार, हमें स्वाभिमान-सम्मान के साथ चाहिए | यह 'सजग चेतना' का ही परिणाम है | चेतना अर्थात् मनुष्य के मन-मस्तिष्क के सजग होने की प्रक्रिया | इस प्रक्रिया में 'व्यक्ति और समाज' अपने सम्मान, आत्मसम्मान, स्वाभिमान अधिकार और अस्तित्व पर सोचते-समझते चिंतन करते हुए अपना और अपने समाज का "मूल्य बोध" करता है | सचेत होता है | जिससे उस 'व्यक्ति और समाज' की चेतना की जाग्रतावस्था आगे चलकर उसे एक दृष्टी देती है | किसी भी "व्यक्ति और समाज" की चेतना के निर्माण में ऐतिहासिक बोध, ऐतिहासिक दृष्टि, ऐतिहासिक अध्ययन, सामजिक बोध और सांस्कृतिक बोध आदि का वस्तु-परक बोध आवश्यक है | दलित व्यक्ति और समाज की चेतना के सृजन अर्थात् निर्माण पर दलित साहित के दलित कवि मलखान सिंह एक साक्षात्कार में कहते हैं—"जिस संस्कृत और समाज में हम रह रहे हैं | उसमें कौन-कौन सी चीजें हैं ? जो हमें प्रभावित करती हैं | हमें एक होने से रोकती हैं | हमें गुलामी की तरफ ले जा रहीं हैं | हमें विवेक शून्य बना रहीं हैं | हमारा मूल्य क्या है? ये सब चीजे जिस दिन व्यक्ति और समाज के अन्दर आ जायेंगी | उस दिन चेतना का निर्माण हो जायेगा |"[12]

दलित चेतना की यह बात दलित 'व्यक्ति और समाज' पर बहुत गहरे तक बैठती है | जब दलित व्यक्ति अपने अस्तित्व, अस्मिता, अधिकार और सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य एक मुक्ति की दृष्टि से पहचानते हुए उसे अभिव्यक्त करता है | इसे हम "दलित चेतना" कह सकते हैं | शरणकुमार लिंबाले 'दलित साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र' पुस्तक में लिखतें हैं—"दलित चेतना दलित साहित्य का महत्त्वपूर्ण जनबीज है|"[13] या "दलितों की वेदना ही दलित साहित्य की जन्मदात्री है |"[14] वे आगे लिखतें हैं कि "दलित चेतना जाति-व्यवस्था के विरुद्ध शुरू हुआ विद्रोह है |"[15] शरणकुमार लिंबाले अपनी आत्मकाथा "अक्करमाशी" में लिखते हैं– "मैं कौन हूँ? मेरी आँवत किससे है?"[16] मैं कौन हूँ?— यह चिंता दलित चेतना है| मेरी आँवत किससे है?— आँवत अर्थात् पहले मैं किससे?, मेरा संबंध किससे है?, मेरी पहचान किससे है? मेरी अस्मिता क्या है? क्या मेरी "आँवत"— मूल उत्पति दलित गर्भनाल से , ब्राह्मण पुत्र के रूप में है | मैं कौन हूँ— दलित या ब्राह्मण? मैं पहले किससे हूँ? मैं किसके लिए हूँ? मेरी अस्मिता क्या है? मेरी सामाजिक पहचान क्या है? यह संबंध-पहचान-अस्तित्व संकट का चिंतन ही दलित व्यक्ति की अस्मिता को दर्शाता है | जब यह दलित व्यक्ति की पहचान के संकट का चिंतन समाज के सन्दर्भ में साहित्य में अभिव्यक्त होता है तो उसे "दलित अस्मिता" कहते हैं| यह अस्मिता बोध दलित लेखन की रचनाशीलता में उर्जा देता है | जो अधिकार के साथ 'साहित्य और समाज' में अभिव्यक्त करता है— मैं मनुष्य हूँ| मुझे मानवीय गरिमा के सभी अधिकार मिलने चाहिए |

दलित साहित्य अर्थात् दलित लेखकों द्वारा दलित चेतना से दलितों के विषय में किया गया लेखन से है | जिसके केंद्र में मानवीय मुक्ति चाहने वाला दलित समाज है | साहित्य में अभिव्यक्त होने वाला दलित समाज गैर-दलित समाज से अलग है | जब समाज अलग है तो उसका सौन्दर्य शास्त्र भी अलग होगा | इसलिए दलित साहित्य ने अपने समाज का "नया सौन्दर्यशास्त्र" गढ़ा और उसी के आधार पर दलित साहित्य को अभिव्यक्त किया | नया सौन्दर्यशास्त्र गैर-दलित साहित्य या "हिन्दू लिट्रेचर" के सौन्दर्यशास्त्र—"सत्यम्, शिवम् और सुन्दम्" के सामानांतर— "यातना, संघर्स और स्वप्न" गढ़ा और खड़ा किया | सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् का सौन्दर्यशास्त्र कहीं-न-कहीं से रहस्यमई है | इस सौन्दर्यशास्त्र बहुसंख्यक अज्ञानी दलित, आदिवासी और स्त्रियों के मन-मस्तिष्क को गुलाम बनाकर उनके "श्रम और सेवा" को भोगने का भाव निहित है | इस सौन्दर्यशास्त्र में संस्कार, पवित्रता और ईश्वर जैसा रहस्ययुक्त भाव विद्यमान है | जिससे दलितों, आदिवासियों और स्त्रियों को हमेशा दूर रखा गया, साथ ही- उनके गुलाम मन-मस्तिष्क में लालच का भाव भी भरा जाता रहा कि तम्हें स्वर्ग इसी से मिलेगा, तुम्हारी अंतिम परिणति इसी में है | 'मुक्ति' की इस रहस्यमई अवधारणा ने निवर्तमान "शूद्र", आज— दलित, आदिवासी और स्त्रियों का "सुपर शोषण" किया |

चेतना संपन्न जनतंत्रीय आधुनिक दलित समाज ने अपनी मानवीय मुक्ति के लिए दलित साहित्यका 'नया सौन्दर्यशास्त्र'— "यातना, संघर्ष और स्वप्न" गढ़ा | ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं— "दलित साहित्य की अंतर्चेतना में वेदानामूलक संघर्ष भाव की प्रधानता है जो यातना से उपजी है |"[17] यह यातना दलित सौन्दर्य के लिए महत्त्वपूर्ण है | राजेंद्र यादव दलित साहित्य के सौन्दर्यशास्त्र पर लिखते हैं— "साहित्य जिन तत्त्वों से अमर, स्थाई या सार्वभौमिक होता है, उनमें तीन मुझे सबसे अच्छे लागते हैं—संघर्स, यातना(सफरिंग) और विजन...."[18] राजेंद्र यादव 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका के अंक-41 के एक लेख में 'दलित साहित्य के सौन्दर्यशास्त्र' को खोलते हुए, लिखते हैं— "जो नया सौंदर्यशास्त्र बनेगा, वह संघर्ष से शुरू होगा, उस यातना से शुरू होगा, चाहे वह उसका रिअलाइज करे अथवा उस यातना को, उसकी तकलीफ को, उसके भेदक रूप को समझने के रूप में हो, और उसके बाद, बदलने की मानसिकता के रूप में हो, जिसे हम संघर्ष कह सकते हैं| तीसरे— एक स्वप्न के रूप में होगा, हमें करना क्या है? हमें सामानांतर सौन्दर्यशास्त्र देना है, वैकल्पिक समाज बनाना है, यह सारा संघर्ष साहित्य में भी है, समाज में भी |"[19]

तुलसी राम लिखते हैं कि— "सौन्दर्यशास्त्र शांत समाज की देन है | जब समाज में शांति होती है | समृद्धि होती है तो सौन्दर्यशास्त्र विकसित होता है | जिस समाज में अशांति है, हिंसा है, लोग भूखे प्यासे मर रहे हैं तो ऐसे समाज में सौन्दर्यशास्त्र की कल्पना मुश्किल से होती है, यदि होती है तो उसका रूप विल्कुल अलग होता है |"[20] दलित समाज बिलकुल अलग रूप का समाज है | जिस समाज में भूख, पीड़ा, वेदना, यातना, हिंसा, सब कुछ व्याप्त है | अतः इस समाज का "सौन्दर्यशास्त्र बिल्कुल अलग रूप" का होगा | इसीलिए दलित साहित्य ने अपना नया सौन्दर्यशास्त्र गढ़ा— "यातना, संघर्ष और स्वप्न|"

दलित साहित्य अपने चिंतन और वैचारिकी का अधार— गौतम बुद्ध, अश्वघोष, कबीर, ज्योतिबा फुले, डॉ. अम्बेडकर के मानवीय मुक्ति के विचारों को मानता है | अश्वघोष, जो जन्मना ब्राह्मण थे, ने ब्राह्मणवादी व्यवस्था

के विरूद्ध प्रतिरोध ही नहीं किया बल्कि शूद्र अर्थात् दलितों, आदिवासियों, पिछड़ों और स्त्रियों की मानवीय मुक्ति के लिए ब्राह्मणी व्यवस्था का सीधा और तार्किक विरोध किया | वे अपने ग्रन्थ "वज्रसूची" में लिखते हैं— "आपने ऐसा कहा है— इस संसार में शूद्र मुक्ति के अधिकारी नहीं हैं, उनका एकमात्र कर्तव्य है ब्राह्मणों की सेवा | जिस प्रकार सबके अंत में शूद्र नाम आया है, उस प्रकार वह सबसे नीचे है |" "यदि ऐसा ही है, तब इन्द्र (देवाती देव) भी इस उक्ति के अनुसार नीच होते हैं | 'श्वयुवमघोनमिति' इसमें श्वान अर्थात् कुत्ता और (क्योंकि) युवक इन्द्र से पहले आया है तो क्या उसे मघवा(इन्द्र) से श्रेष्ठ समझना चाहिए? लेकिन ऐसा नहीं देखा जाता है | क्या किसी को इसलिए दोष दिया जाएगा कि उसका नाम अंत में आया?..... 'उमा-महेश' कहने से क्या उमा-महेश से श्रेष्ठ मानी जाएगी? ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र कहने से ही, क्या शुद्र को चाहे वह कितना ही सज्जन और विद्वान क्यों न हो, नीच एवं दुर्जन ठहराना पहले दर्जे का बचपना नहीं है? यह तो केवल संयुक्त शब्द हैं |"[21]

गौतम बुद्ध ने वर्णव्यवस्थ के खिलाफ पहली बार मजबूत प्रहार करते हुए सीधा प्रतिरोध किया | यह बुद्ध का शूद्र अर्थात् दलित समाज की मानवीय मुक्ति के लिए किया गया सीधा प्रयास है | बुद्ध के वर्ण-व्यवस्था के विरोध पर तुलसी राम लिखते हैं— "बुद्ध पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वर्ण व्यवस्था के खिलाफ पहली बार व्यवस्थित ढंग से आवाज उठाई | वर्ण व्यवस्था के विरोध के कारण ही ब्राह्मण उनसे बहुत नराज हुए |"[22] दलित साहित्य के दार्शनिक और वैचारिक आधार में बुद्ध के योगदान पर लिखते हैं— "दलित साहित्य के दार्शनिक और वैचारिक आधार में गौतम बुद्ध हैं | गौतम बुद्ध पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने ढाई हजार वर्ष पूर्व वर्ण व्यवस्था पर जबरदस्त प्रहार किया था |"[23] ऐसे ही, कबीर और अखिल भारतीय भक्ति आन्दोलन के चिंतन में "मनुष्यत्व और प्रेम" के प्रखर मानवमुक्ति का सौन्दर्य व्यक्त हुआ —

"जो तू ब्राहमण ब्राहमणी जाया |
तौ आन बाट काहे नहीं आया |
तुम कत ब्राहमण हम कत शूद |
हम कत लोहू तुम कत दूध |"[24]--- (कबीर)

जन्मना, जाति और वर्ण पर कबीर ने प्रश्न चिह्न खड़ा करते हुए तार्किक प्रहार किए | जिसमें मनुष्य द्वारा मनुष्य के विभाजन, को ईश्वर कृत बताए–जाने का कबीर ने सीधा विरोध करते हुए खारीज किया | इसी आधार पर उन्होंने "शूद्र और श्रेष्ठ" की दीवार को तोड़ा | 'मनुष्यत्व' अर्थात् मानव सत्य है | प्रेम और बंधुत्व से सदभाव का जीवन ही, उसका उद्देश्य है | जन्म से न कोई बड़ा है न कोई छोटा | लोग अपने श्रम, मनुष्यत्व और प्रेम से बड़ा या छोट होतेहैं | कबीर की इस बात की ताकत मानव और सामाजिक समानता की स्थापना में है | कबीर का यह विचार दलित साहित्य की वैचारिकी का मूल है | यही दलित साहित्य का लक्ष्य और मूल उद्देश्य है |

दलित समाज की मानवीय मुक्ति के लिए ज्योतिबा "फुले" ने 'स्कूल और ज्ञान' के द्वार को समान और स्वतन्त्र रूप से खोला | उन्होंने अस्पृश्यता, जाति भेद, लिंग भेद, धर्म भेद के खिलाफ सामाजिक नेता की तरह संघर्ष किया | बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर उनके सामाजिक नेतृत्व व्यक्तित्व पर लिखते हैं— "महात्मा फुले एक संघर्षशील नेता और चातुर्वर्ण तथा जाति भेद पर कठोर प्रहार करके मानवीय समानता की घोषणा करने वाले

प्रथम लोक नेता थे |"[25] फुले ने 'मानव समानता' के लिए सत्यशोध आन्दोलन का नेतृत्व और प्रचार किया | उनके सत्यशोध आन्दोलन का मुख्य कार्य था—"सामाजिक विषमता को नष्ट करना, ईस्वर और भक्त के बीच के दलालों को नष्ट करना, सभी के लिए शिक्षा का समान द्वार खोलना |"[26] जो दलित समाज और साहित्य के लिए मूल्यवान रहा |

इस लम्बी चिंतन परंपरा के सार तत्त्व और डॉ. अम्बेडकर के चिंतन के मूल तत्त्व से दलित साहित्य की वैचारिकी बनी है | ओमप्रकाश वाल्मीकि इस पर लिखते हैं— "उसका अर्थात् दलित साहित्य का मूल स्रोत डॉ. अम्बेडकर के विचार, तत्त्व ज्ञान और संघर्षशील नेतृत्व में है | दलित आन्दोलन ने डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा को पूर्णतः आत्मसात किया है |"[27] डॉ. अम्बेडकर ने नई समतामूलक सामाजिक व्यवस्था की स्थापना को लक्ष्य बनाया | जिसमें सभी लोगों को सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक समानता और 'एक मूल्य : एक मनुष्य' के मानवीय अधिकार और विश्वास का विचार निहित है | जो समान मानवीय मूल्य— स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को अधिकार के साथ अभिव्यक्त करता है और स्थापित करने का जनतांत्रिक तरीके से लिखित प्रयास करता है | जो न्यायालय, संविधान और जनतंत्र के रूप में साधिकार मिले हुए हैं |

दलित समाज की मुक्ति का आन्दोलनकारी संग्राम, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर द्वारा "महाड़ सत्याग्रह" और 24 दिसम्बर, 1927 को "मनुस्मृति दहन" के साथ शूरू होता है | यह आन्दोलनकारी सत्यग्रह दलितों में— सम्मान, स्वाभिमान, अधिकार, मानवीय-मूल्य बोध, मुक्ति की चेतना, अपनी अस्मिता की पहचान का भाव बोध पैदा किया | जिस चेतना से साधिकार दलित समाज संघर्ष करना शूरू करता है |

अपनी दलित मुक्ति की वैचारिकी दलित साहित्य ने जनतांत्रिक तरीके से बनाई | इसी वैचारिकी के साथ दलित साहित्य अपनी साहित्यिक अभिव्यक्ति करता है | यह दलित समाज के 'मानवीय मुक्ति' और 'मानवीय अधिकार प्राप्ति' का ही आन्दोलन नहीं है | यह दलितों के साथ— आदिवासियों, स्त्रियों और पिछड़े समाज की मुक्ति का भी अन्दोलन है, क्योंकि ये समाज भी सभी मानवीय अधिकार से वंचित हैं |

2. "दलित" कौन?

प्रो. श्यौराज सिंह 'बेचैन' दलित शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं— "दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है |"[28]

कंवल भारती अपनी पुस्तक "दलित साहित्य की अवधारणा" में "दलित" शब्द पर लिखते हैं— "दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू होता है | जिसे कठोर और गंदे कार्य करने के लिये बाध्य किया जाता है | जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित है |"[29]

ओमप्रकाश वाल्मीकि "दलित" शब्द की अवधारण स्पष्ट करते हुए, लिखते हैं—(1) "'दलित' शब्द का अर्थ है—जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि |"

(2) "दलित शब्द व्यापक अर्थ बोध की अभिव्यंजन देता है | भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है | दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन यापन करने के लिए बाध्य जनजातीय और आदिवासी, जरायम पेशा,घोषित जातियाँ सभी इस दायरे में आती हैं | सभी वर्गों की स्त्रियाँ दलित हैं | बहुत कम श्रममूल्य पर, चौबीसों घंटा काम करने वाले श्रमिक, बंधुआ मजदूर दलित की श्रेणी में आते हैं |"[30]

अर्जुन डांगले 'दलित'शब्द की व्याख्या करते हैं—"दलित शब्द साहित्य के सन्दर्भ में नया अर्थ देता है | दलित यानी शोषित, पीड़ित समाज, धर्म व अन्य कारणों से जिसका आर्थिक शोषण किया जाता है, वह मनुष्य और वही मनुष्य क्रांति कर सकता है | यह दलित साहित्य का विश्वास है |"[31]

मराठी कवि नारायण सुर्वे 'दलित' शब्द पर लिखते हैं—"समाज में जो पीड़ित हैं, वो दलित हैं |"[32] 'दलित' शब्द की व्याख्या बाबूराव बागुलकरते हैं कि "दलित वह है जो वर्ण व्यवस्था और उस की मानसिक गुलामी को ध्वस्त कर देना चाहता है | दलित इस विश्वास और जीवन को नए रूप में ढाल देना चाहता है जिसके हाथों को इस युग ने प्रज्ञावत प्रलयंकारी बनने के लिए, शस्त्रों तथा शास्त्रों को उपलब्ध करा दिया है |"[33] इस प्रकार 'दलित' शब्द उस समाज को दर्शाता और साहित्यिक अभिव्यक्ति देता है जो समाज सभी मानवीय अधिकारों से वंचित, शोषित और उपेक्षित है | जिस पर जाति और वर्ण व्यवस्था अर्थात् वर्णाश्रमी मूल्यों को थोपा गया | जिसे ज्ञान प्राप्त करने का कभी भी अधिकार नहीं दिया गया | वही दलित है |

3. "दलित साहित्य" और "साहित्यकार" कौन?

मराठी दलित साहित्य के कवि नारायण सुर्वे दलित साहित्य को परिभाषित करते हैं—" 'दलित साहित्य' संज्ञा मूलतः प्रश्न सूचक है | महार, चमार, माँग, कसाई, भंगी और जातियों की स्थितियों के प्रश्नों पर विचार तथा रचनाओं द्वारा उसे प्रस्तुत करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है |"[34]

श्यौराज सिंह 'बेचैन' दलित साहित्य को परिभाषित करते हैं—"दलित साहित्य उन अछूतों का साहित्य है | जिन्हें सामाजिक स्तर पर सम्मान नहीं मिला | सामाजिक स्तर पर जातिभेद के जो लोग शिकार हुए हैं, उनकी छाटपटाहट ही शब्द बद्ध हो कर दलित साहित्य बन रही है |"[35]

कंवल भारती 'दलित साहित्य की अवधारणा'नामक पुस्तक में लिखते हैं कि "दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है | जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है अपने जीवन संघर्ष में दलितों ने जिस यथार्थ को भोग है, दलित साहित्य उनकी उसी अभिव्यक्ति का साहित्य है | यह कला के लिए कला नहीं, बल्कि

जीवन का और जीवन की जिजीविषा का साहित्य है | इसलिए कहना न होगा कि वास्तव में दलितों द्वारा लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य की कोटी में आता है |"[36]

दलित साहित्य के थिंकटैंक ओमप्रकाश वाल्मीकि 'दलित साहित्य' को परिभाषित करते हुए लिखते हैं—"दलित शब्द दबाये गए, शोषित, पीड़ित, प्रताड़ित के अर्थों के साथ जब साहित्य से जुड़ता है तो विरोध और नकार की ओर संकेत करता है | वह नकार या विरोध चाहे व्यवस्था का हो, सामाजिक विसंगतियों या धार्मिक रूढ़ियों, आर्थिक विषमताओं का हो या भाषा प्राप्ति के अलगाव का हो या साहित्यिक परंपराओं, मानदंडों या सौन्दर्यशास्त्र का हो, दलित साहित्य नकार का साहित्य है जो संघर्ष से उपजा है तथा जिसमें समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व का भाव है, और वर्ण व्यवस्था से उपजे जातिवाद का विरोध है|"[37]

बाबूराव के शब्दों में—"मनुष्य की मुक्ति को स्वीकार करने वाला, मनुष्य को महान मानने वाला, वंश, वर्ण, और जाति श्रेष्ठत्व का प्रबल विरोध करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है |"[38]

दलित साहित्यके दायरे को बढ़ाते हुए, उसमें 'चेतना' और 'विचार' को प्रमुख मानते हुए,कवि मलखान सिंह एक 'साक्षात्कार' में दलित साहित्य और साहित्यकार को परिभाषित करते हैं—"वह व्यक्ति, कलाकार जिसका विचार और आचरण—अम्बेडकरवादी हो, फुलेवादी हो, बुद्धिष्ठ हो, समतावादी हो, जाति और वर्ण का विरोधी हो, और जो संगत रखने की क्षमता रखता हो | वही हमारा दलित साहित्यकार है | वही दलित रचना है |"[49]यहाँ सवाल प्रतिरोध की चेतना का है |

तुलसी राम 'दलित साहित्य' की अवधारण पर लिखते हैं—"दलित साहित्य की सबसे अच्छी परिभाषा है—'जाति-व्यवस्था का विरोधी साहित्य |'...वर्ण व्यवस्था के खिलाफ जिसने भी लिखा वह दलित साहित्य है|"[40]"वर्ण-व्यवस्था का विरोध जो अनिवार्यतः ईश्वर का भी विरोध है, जो मूल रूप से दलित साहित्य का आधार है | बौद्धों के चिंतन में ही इस व्यवस्था के विरोध की शुरूआत हुई|"[41]

चौथीराम यादव एक साक्षात्कार में दलित साहित्य को परिभाषित करते हुए, कहते हैं—"जो साहित्य अम्बेडकरवादी या अम्बेडकर की वैचारिकी से प्रेरणा लेकर लिखा जाता राहा है | वाही साहित्य, दलित साहित्य है | और अम्बेडकर ने स्वयं प्रेरणा ली है—बुद्ध से, कबीर से, ज्योतिबा फुले से |"[42]

नामवर सिंह 'दलित साहित्य' को ठोस रूप देते हुए लिखते हैं—"दलित साहित्य वह है जो दलितों द्वारा दलितों के बारे में दलितों के लिए लिखा गया | जो केवल अम्बेडकर से प्रभावित है | उसमें न गांधीवाद की मिलावट है न मार्क्सवाद की |"[43] जो सही जान पड़ता है |

अंतत: 'दलित', 'दलित लेखन'(स्वानुभूति और सहानुभूति),'दलित साहित्य', 'दलित चेतना', 'दलित अस्मिता', 'दलित साहित्य की वैचारिकी', 'दलित साहित्य कीअवधारणा', उसकी प्रतिबद्धता, उसके लक्ष्य

और उद्देश्य को यों स्पष्ट किया जा सकता है—'दलित' कौन ?—'जिस व्यक्ति या समाज को सभी मानवीय अधिकारों से वंचित रखा गया और जिस पर जाति और वर्णाश्रमी शोषणकारी मूल्यों को थोपा गया |' 'दलित साहित्य' और 'साहित्यकार' कौन ?—'जिस साहित्य और साहित्यकार के साहित्य में—जाति, वर्ण, वंश, संस्कार, दया, धर्म, कर्मकाण्ड, देवी-देवता, आत्मा,अवतार, भाग्य एवं भगवान अर्थात् ईश्वर की मान्यताओं, सिद्धांतों और अवधारणाओं को सीधेनकारा जाता हो' और जो मानवीय मुक्ति के लिए संघर्षरत हो |जिसमें मानवीय मुक्ति की चेतना हो | मानव अधिकारों और मानव जीवन मूल्य—समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के मनुष्यत्व भाव के प्रति प्रतिबद्ध हो | जो जाति और वर्णाश्रमी मूल्यों की विरोधी और मानव मुक्ति की चिन्तन धारा—अश्वघोष, बुद्ध, कबीर, ज्योतिबाफूले और बाबा साहब डॉ.अम्बेडकर के विचारों और चेतना से अनुप्राणित हो, जो यातना, संघर्ष और स्वप्न के सौन्दर्यशास्त्र से उपजा हो और जो इसी प्रतिरोध की चिंतन परंपरा को अपनी वैचारिकी का आधार मानती हो | वही साहित्य 'दलित साहित्य' हैऔर वही साहित्यकार 'दलित साहित्यकार' है |

सन्दर्भ और टिप्पणियाँ

1. कंवल भारती—'दलित साहित्य की अवधारणा', पृष्ठ-54, प्रथम-संस्करण-जनवरी 2006, बोधिसत्व प्रकाशन, रामपुर, उत्तर प्रदेश
2. वही, पृष्ठ-55
3. शरणकुमार लिंबाले—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', अनुवादक-रमणिका गुप्ता, 'दलित चेतना की उर्ध्वमुखी—यात्रा'—लेखिका—रमणिका गुप्ता,पृष्ठ-23, प्रथम संस्करण-2000, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
4. कंवल भारती—'दलित साहित्य की अवधारणा', पृष्ठ-55-56, प्रथम-संस्करण-जनवरी 2006, बोधिसत्व प्रकाशन, रामपुर, उत्तर प्रदेश
5. मोहनदास नैमिशराय—'हिंदी दलित साहित्य', पृष्ठ-354, प्रथम संस्करण : 2011, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली
6. शरणकुमार लिंबाले—'अक्करमाशी', पृष्ठ-14-15, संस्करण-2009, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
7. ओमप्रकाश वाल्मीकि—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' पृष्ठ-13 "दलित" पद की व्याख्या देखें, संस्करण-2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
8. शरणकुमार लिंबाले—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', अनुवादक-रमणिका गुप्ता, पृष्ठ-42, प्रथम संस्करण-2000, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
9. साभार--दलित अस्मिता-त्रैमासिक पत्रिका- संपादिका-विमल थोरात, पृष्ठ-47, जुलाई-दिसम्बर 2011, एंड्रीयूजगंज, नई दिल्ली
10. शरणकुमार लिंबाले—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', अनुवादक-रमणिका गुप्ता, पृष्ठ-43, प्रथम संस्करण-2000, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
11. वही,पृष्ठ-163

12.टिप्पणी—दलित कवि मलखान सिंह से लिया गया साक्षात्कार, जो भी अप्रकाशित है | जिसे मैंने हैदराबाद विश्वविद्यालय हैदराबाद, में 'दलित और आदिवासि' पर होने वाली सेमीनार के दौरान लिया था |
13.शरणकुमार लिंबाले—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र', अनुवादक-रमणिका गुप्ता, पृष्ठ-44, प्रथम संस्करण-2000, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
14.वही, पृष्ठ—43
15.वही, पृष्ठ-44
16.शरणकुमार लिंबाले—(आत्मकथा)-अक्करमाशी, पृष्ठ-65, प्रथम संस्करण-2009, अनुवादक-सूर्यनारायण रणसुभे, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
17.ओमप्रकाश वाल्मीकि—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' पृष्ठ-48, की व्याख्या देखें, संस्करण-2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
18.राजेंद्र यादव—काली सुर्खियाँ (संपादित कहानी संग्रह)—पृष्ठ-12, संस्करण-1994 ई., प्रवीण प्रकासन
19.राजेंद्र यादव—'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका (संपादिका-रमणिका गुप्ता) पृष्ठ-12, अंक-41,1998 ई.
20.'कथादेश' पत्रिका- दलित प्रश्न—'प्रो. तुलसीराम : भारतीय समाज के उत्खननकर्ता'—साक्षात्कार–मुद्राराक्षस, पृष्ठ-43, जून 2009
21.अश्वघोष—वज्रसूची, पृष्ठ-148-149 'दलित जन उभर', संपादक-नीता मल्ल
22.प्रगतिशील-वसुधा-91, पत्रिका—संपादक-स्वयं प्रकाश, राजेन्द्र शर्मा, प्रोफ़ेसर तुलसी राम से एक-साक्षात्कार-डॉ. वंदना चौबे और सुचिता त्रिपाठी, अप्रैल-जून-2012, भोपाल, मध्यप्रदेश
23.डॉ. तुलसी राम—'दलित साहित्य की अवधारणा' लेख पृष्ठ-60, 'चिंतन की परंपरा और दलित साहित्य'-श्यौराज सिंह बेचैन और देवेन्द्र चौबे
24.कंवल भारती—'दलित साहित्य की अवधारणा', पृष्ठ-15, प्रथम-संस्करण-जनवरी 2006, बोधिसत्व प्रकाशन, रामपुर, उत्तर प्रदेश
25.ओमप्रकाश वाल्मीकि—'यह अंत नहीं' : ओमप्रकाश वाल्मीकि , नई कहानी -3, इग्नु के लिए लिखे गये शोध पत्र से साभार-पृष्ठ-74
26.वही, पृष्ठ—75
27.वही, पृष्ठ—75
28.ओमप्रकाश वाल्मीकि—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' पृष्ठ-13, की व्याख्या देखें, संस्करण-2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
29.कंवल भारती—'दलित साहित्य की अवधारणा', पृष्ठ-77, प्रथम-संस्करण-जनवरी 2006, बोधिसत्व प्रकाशन, रामपुर, उत्तर प्रदेश
30.टिपण्णी—ओमप्रकाश वाल्मीकि—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' पुस्तक में पृष्ठ-13-14 पर 'दलित'शब्दकी व्याख्या करते हैं—"दलित शब्द का आर्थ है—जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित,वंचित आदि |" "दलित शब्द व्यापक अर्थ बोध की अभिव्यंजान देता है | भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है

| दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन यापन करने के लिए बाध्य जनजातीय और आदिवासी, जरायम पेशा,घोषित जातियाँ सभी इस दायरे में आती हैं | सभी वर्गों की स्त्रियाँ दलित हैं | बहुत कम श्रममूल्य पर, चौबीसों घंटा काम करने वाले श्रमिक, बंधुआ मजदूर दलित की श्रेणी में आते हैं |"

31. अर्जुन डांगले—दलित साहित्य : एक अभ्यास, पृष्ठ-41,1978 ई., महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृति मंडल
32. 'हंस' पत्रिका से लेख- नारायण सूर्वे- 1993 ई.
33. बाबुराव बागुल—'दलित साहित्य आज का क्रांति विज्ञान', पृष्ठ-29
34. नारायण सुर्वे की 'दलित' शब्द की व्याख्य साभार— ओमप्रकाश वाल्मीकि—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' पृष्ठ-16, की व्याख्या देखें, संस्करण-2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
35. श्यौराज सिंह 'बेचैन'—'एक अलग रास्ता है दलित कथा का', 'अंगुत्तर', पृष्ठ-70, जुलाई-अगस्त–सितम्बर 1997
36. कंवल भारती—'दलित साहित्य की अवधारणा', पृष्ठ-15, प्रथम-संस्करण-जनवरी 2006, बोधिसत्व प्रकाशन, रामपुर, उत्तर प्रदेश
37. ओमप्रकाश वाल्मीकि—'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' पृष्ठ-16, की व्याख्या देखें, संस्करण-2011, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली
38. बाबूराव बागुल—दलित साहित्य हे तर माणसाचे साहित्य, सिंह गर्जना, दीवाली—अंक- 1975 ई.
39. टिप्पणी—दलित कवि मलखान सिंह से लिया गया साक्षात्कार, जो भी अप्रकाशित है | जिसे मैंने हैदराबाद विश्वविद्यालय हैदराबाद, में दलित और आदिवासियों पर होने वाली सेमीनार के दौरान लिया था |
40. प्रगतिशील-वसुधा-91, पत्रिका—संपादक-स्वयं प्रकाश, राजेन्द्र शर्मा, प्रोफ़ेसर तुलसी राम से एक-साक्षात्कार-डॉ. वंदना चौबे और सुचिता त्रिपाठी, अप्रैल-जून-2012, भोपाल, मध्यप्रदेश
41. 'अपेक्षा' पत्रिका संपादक तेज सिंह, पृष्ठ-136, अंक 32-33, रपट-'दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र और इतिहास-लेखन की समस्याएँ'-नताश सिंह, पटना वि.वि. पटना से, पृष्ठ-136, अंक 32-33, जुलाई-दिसम्बर 2010,
42. टिप्पणी—प्रो. चौथीराम यादव से हैदराबाद विश्व विद्यालय में होने वाली 'दलित और आदिवासी' पर मैंने साक्षात्कार लिया था, जो अभी अप्रकाशित है | यह संदर्भ उसी इंटरविव से साभार है |
43. टिपण्णी—"परीक्षा मंथन" पत्रिका से साभार जो इलहाबाद से प्रकाशित होती है | प्रो. नामवर सिंह का यह उद्धरण उसी से साभार है |